International Journal of Research in Social Sciences
Available online at http://euroasiapub.org/journals.php
Vol. 7 Issue 3, March 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081 | Thomson Reuters ID: L-5236-2015
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com Double-Blind Peer Reviewed
Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

स्त्री स्वाभिमानः स्त्री पुरुष बदलते हुए संबंध

डॉ. सतीश कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर
शहीद भगत सिंह (सांध्य) महाविद्यालय

इक्कीसवी सदी के प्रगतिशील समाज में भी स्त्रियों को पुरुषों की नजर से ही देखा जाता है, क्योंकि समाज का एक वर्ग आज भी ये मान कर चलता है कि स्त्रियाँ शारीरिक और मानसिक रूप से पुरुषों से कमजोर हैं। इसमें सनातन काल से चली आ रही पुरुष की अधिपत्यवादी दृष्टि (स्त्री को काबू में रखना जरूरी है कि मानसिकता) का भी प्रमुख योगदान है।

आज स्त्रियाँ भी अपनी दृष्टि से अपना मूल्यांकन करने लगी हैं लेकिन जितना करना चाहिए अभी उससे बहुत दूर हैं? अभी भी अनेक पुरुष अपने ऑफिस का दर्द, अफसर द्वारा डांट दिए जाने का गुस्सा, माता-पिता के साथ हुए तनाव की झुंझलाहट, खाने में नमक मिर्च ज्यादा या कम होने की खीज, नौकरी छूटने या सैलरी कम मिलने पर, किसी कुलीग के ऊँचे ओहदे पर पहुंचने और खुद जहां के तहां रह जाने का पछतावा, किसी भी विपरीत परिस्थितियों में रहने पर अपनी झुंझलाहट अपना गुस्सा अपना डिप्रेशन आदि को घर में आकर अपनी पत्नी को डांटकर या थप्पड़ मारकर निकालते हैं? आज भी पुरुष द्वारा ऐसा अमानवीय व्यवहार होने पर भी परिवार और समाज मूकदर्शक ही बना रहता हैं अथवा पति पत्नी में तो ऐसा हो ही जाता है कहकर स्त्री को ही समझौते के लिए प्रेरित करते हैं। अगर स्त्रियाँ सिर्फ अपने पति की तरफ हाथ ही उठा दे तो यही परिवार और समाज उसके विरोध में खड़े हो उसे सजा देने के लिए तुरंत तैयार हो जाते हैं।

जिस परिवार में ऐसी घटनाएँ होती हैं परिवार के अन्य सदस्यों की नजरों में पीड़ित स्त्री की स्थिति बदल जाती है वह सबकी नजरों में लाचार और बेचारी हो जाती है, और परिवार के लोग ही एक परम्परागत सोच की कीचड़ उस पर उलीचने लगते हैं कि यह एडजस्ट करना नहीं जानती, परिवर में तो एडजस्ट करना ही पड़ा है। बिना एडजस्ट किए तो परिवार चलता ही नहीं है। इसे छोड़कर कहीं और जायेगी तो एडजस्ट तो वहां पर भी करना ही पड़ेगा, तो यहीं क्यों नहीं एडजस्ट कर लेती? कह सकते हैं कि चीजें तो वही रहती हैं लेकिन देश, काल और परिस्थिति के अनुसार उनके अर्थ बदल जाते हैं। ऐसी पत्नी जिसे अपने पति के हाथों अपमानित और प्रताड़ित होना पड़ता है उसके लिए भी अपने घर के मायने बदल जाते हैं? उसके लिए भी चीजें वैसी ही नहीं रहती जैसे पहले थीं।

यह अकाट्य सत्य हे कि चाहे घरेलु विवाद हों, चाहे दंगे फसाद हों, चाहे दो जातियाँ के बीच दुश्मनी हो अथवा दो देशों के बीच युद्ध सभी की अंतिम परिणीति पराजित दल की स्त्रियों की टांगों के ऊपर जांघों से गुजरती विजेता दल के पुरुषों की विजयी मुस्कान से होती है। यह बड़ा दर्दनाक है, हृदयविदारक है, कड़वा है, लेकिन यही सत्य है। पराजित दल को खून का घूंट पीकर पराजित मानसिकता लिए मन मसोसकर और हाथ मलते रह जाना पड़ता है, क्योंकि वह चाह कर भी कुछ नहीं कर पाता। इसके पीछे की मनोवैज्ञानिकता यह है कि शारीरिक रुप से पराजित दल को मानसिक रूप से तोड़ने के लिए उसकी इज्जत से खिलवाड़ करना जरूरी है। जिससे वह कभी भी सिर उठाकर न चल सके (शारीरिक रूप से

International Journal of Research in Social Sciences
Available online at http://euroasiapub.org/journals.php
Vol. 7 Issue 3, March 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081 | Thomson Reuters ID: L-5236-2015
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com Double-Blind Peer Reviewed
Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

लाचार और मजबूर करने के साथ ही प्रतिद्वन्दी को मानसिक रूप से भी तोड़ा जाता है, मन से हारा व्यक्ति कभी जीत नहीं पाता, कहा भी गया है–'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत') और उसके शिकार घर की बच्चियां और स्त्रियां ही होती हैं। सम्भंवत: स्त्री और पुरुष के बीच हुए तनाव में पुरुष की यही मानसिकता काम करती है।

स्त्रियां पढ़ने लिखने की दिशा में लगातार नई-नई ऊँचाईयों को छू रही हैं, उनमें आर्थिक स्ववालंबन भी बढ़ रहा है। निर्णय लेने की स्वतंत्रता और हौसला भी उसने अर्जित किया है। स्त्रियों के पढ़ लिख जाने से, नौकरी करने से, घर से बाहर निकलने के कारण और संवैधानिक अधिकारों के कारण स्त्रियों की सोच के साथ ही भारतीय परिवार की स्त्रियों के प्रति परंपरागत सोच में भी परिवर्तन हुआ। विद्वानों ने कहा कि पढ़े लिखे होने से ज्यादा जरूरी है ज्ञानवान होना, ज्ञानवान व्यक्ति अच्छे और बुरे में अंतर करना सीख जाता हैं। स्त्रियां आज ज्ञानवान हो गई हैं। वह अपने अधिकारों और स्वाभिमान के प्रति ज्यादा संवेदनशील हो गई हैं। हंस की तरह वह भी दूध का दूध और पानी का पानी करने में भी समक्ष होने लगी है।

स्त्रियां हर परिस्थिति में अपने आप को ढाल लेने का हुनर जानती हैं। अब तक वह दूसरों के अनुसार अपने आप को ढालती थीं, लेकिन ज्यों-ज्यों अधिकारों के प्रति उसकी जागरूकता बढ़ी है, देश और दुनिया के विषय में उसकी जो जानकारी बढ़ी है और न्याय व्यवस्था का भी उसे जो सहारा मिला है वह अपने आपको अपने अनुसार भी ढालने लगीं हैं। स्त्रियों को जो अधिकार मिले हैं वे यूँ ही नहीं मिल गये, इन्हें पाने के लिए स्त्रियों ने अनेक कुर्बानियां दी हैं और लंबा संघर्ष किया है। स्त्रियों ने अपने आप को हर क्षेत्र में साबित किया है तब उन्हें कुछ मिल पाया है, जबकि पुरुष को स्वत: ही बगैर किसी योग्यता के वह सब कुछ मिल जाता है जिसके वो हकदार भी नहीं होते। अक्सर कहा जाता है कि स्त्री और पुरुष गृहस्थी के दो पहिए हैं और गृहस्थी को सुचारू रूप से चलाने के लिए या तो स्त्री को पुरूष के अनुसार चलना चाहिए या पुरुष को स्त्री के अनुसार और अक्सर स्त्रियां ही पुरूषों के अनुसार चलना स्वीकार कर लेती थीं लेकिन आज स्त्रियां भी अपने अनुसार अपने परिवार और पति को चलाने लगी हैं। एक समय था कि पुरुष आगे चलता था और स्त्री उसके पीछे-पीछे, फिर स्त्री और पुरुष साथ-साथ चलने लगे अंतत: स्त्रियों ने आगे-आगे चलना शुरू किया और पुरुष उसके पीछे-पीछे चलने लगा। कभी पुरूष का और कभी स्त्री का आगे चलना और अपने हमसफर को पीछे छोड़ देना आदर्श स्थिति नहीं है आदर्श स्थिति तो दोनों का कंधे से कंधा मिला कर चलना ही है।

पुरूष द्वारा कभी एकांत में अथवा कभी भरी सभा में अपनी पत्नी को झिड़क देना, उस पर गुस्सा हो जाना और उसे बात बेबात पर बेइज्जत कर देना, को साधारण और मामूली बात मान लिया जाता है, क्योंकि पुरुष इसे अपना मौलिक अधिकार समझता है। ऐसी मानसिकता को किसी भी नजरिये से सही साबित नहीं किया जा सकता। अभी तक तथाकथित कुछ पुरुषों ने जब चाहा जैसा चाहा स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार किया है। ऐसा देखकर स्त्रियाँ सोचने लगी हैं कि तथाकथित उसके अपने घर में उसकी अपनी हैसियत क्या है? जब चाहा इस्तेमाल किया और फिर फेंक दिया, जैसी? या वह वैसी है जिसके बिना घर का काम चल ही नहीं सकता? घर में उसके होने या न होने से कोई फर्क पड़ता भी है या कोई फर्क ही नहीं पड़ता? वह घर में अपने वजूद को तलाशने लगी है। जो स्थितियों के प्रति उसकी परिपक्व मानसिकता को परिलक्षित करती है।

पुरुष स्वयं गलती करने के बाद भी अपने अहंकार के कारण अपनी गलती स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होता। वह हर परिस्थिति मे अपने आपको विजेता के रूप में देखना चाहता है। स्त्रियों को वह अभी भी परंपरागत तरीके से ही

International Journal of Research in Social Sciences
Available online at http://euroasiapub.org/journals.php
Vol. 7 Issue 3, March 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081 | Thomson Reuters ID: L-5236-2015
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com Double-Blind Peer Reviewed
Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

मनाने की कोशिश करता है। वह कहीं न कहीं इस बात से ज्यादा डरता है कि लोग कहेंगे कि वह जोरू का गुलाम है? अरे कैसा मर्द है एक लड़की को नहीं संभाल सकता? तेरी बीबी तुझे छोड़ कर भाग गयी? कहीं उसकी तथाकथित मर्दानगी पर प्रश्नचिन्ह ना लग जाये। इस सब से बचने के लिए वह ना चाहते हुए भी अपनी पत्नी के साथ अच्छा बुरा वह सब कुछ करता है जिससे उसकी पत्नी की अपेक्षा उसकी श्रेष्ठता द्योतित हो।

स्त्रियां अभी भी चाहती हैं कि वे पुरुष जैसा नहीं बने, वह परिवार को किसी भी तरीके से जोड़े रखना चाहती हैं, जोड़ना और सहजना स्त्रियों का मूल स्वभाव ही है। इसलिए ना चाह कर भी जब तक सहन कर सकती हैं तब तक वह सब कुछ सहन करती हैं। लेकिन अब ऐसा भी होने लगा हैं कि परिवार की अपेक्षा स्त्रियों को अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता, अपने सपने और महत्वाकांक्षा ज्यादा महत्वपूर्ण लगने लगे हैं वह हर स्तर पर पुरुषों से बराबरी चाहती हैं, शारीरिक रूप से भी और मानसिक रूप से भी। अति व्यक्तिवादी सोच के कारण बहुत-सी स्त्रियों कानूनी अधिकारों का दुरुपयोग भी करने लगी हैं जिसके कारण से अभी कुछ समय पहले ही सुप्रीम कोर्ट द्वारा स्त्रियों को मिले अधिकारों में कुछ कटौती करनी पड़ी।

यह तो निश्चित है कि परिवार के बहुमुखी विकास के लिए दोनों पति और पत्नी में से किसी एक को अपनी इच्छायें, आकांक्षाऐं और सपने मारने पड़ते हैं, अपने मन को मारकर अपने घर को जिंदा रखना पड़ता है, अपने सपनों को माकर अपने परिवार के सभी सदस्यों के सपनों को पूरा करना होता है, उन सभी के सपनों को अपना सपना बनाना होता है। लेकिन अब स्त्री अपना मन मारकर, अपनी इच्छाएँ मारकर और अपने सपने मार कर नहीं रहना चाहतीं। वह सोचने लगी हैं कि किसी एक को परिवार के लिए कुर्बानी देनी है तो मैं ही क्यों? पुरुष भी तो यह कुर्बानी दे सकते हैं।

परंपरागत सोच के अनुसार हर रिश्ते को जोड़ कर रखना जरूरी है, इनमें भी शादी तो जन्म जन्मांतर का संबंध माना गया है। लेकिन आज स्त्रियाँ इस सोच में अपने आप को असहज महसूस करने लगी हैं। पहले शादियाँ आपसी प्यार के बिना भी सालों साल चलती थी, लेकिन आज स्त्रियां अपने आदर, सम्मान और खुशी की कीमत पर अपनी कमजोर शादी को अपने मजबूत कंधों पर ढोना नहीं चाहती। अभी तक परिवार, समाज और राष्ट्र को पुरुषों की नजरों से ही देखा गया और चलाया गया है लेकिन स्त्रियाँ अपने आप को साबित कर रही हैं उससे यह लगता है कि जो वह सोच रही हैं उसे हासिल जरूर करेंगी, यहां उन्हें यह भी ध्यान रखना जरूरी है कि वह जो हासिल करना चाहती हैं उसके लिए उन्हें कितनी कीमत देनी होगी, क्योंकि जो भी हम हासिल करते हैं उसकी कीमत हमें जरूर चुकानी पड़ती हैं, कही ऐसा ना हो कि जो हम हासिल करें उससे ज्यादा हम गँवा दें?

पुरुष हर हाल में जीतना चाहता है, लेकिन अब स्त्रियाँ भी चुप रहना नहीं चाहती, सहना नहीं चाहती, किसी भी कीमत पर वह भी अपना हक अपना सम्मान चाहती हैं। आज प्रत्येक कार्य में स्त्री की सहमति असहमति बड़ी महत्वपूर्ण हो गई हैं, पत्नी अगर नहीं चाहती तो उसका पति भी उससे शारीरिक संबंध नहीं बना सकता? स्त्रियों की यह सोच पुरुष की उस परम्परागत सोच पर जबरदस्त आघात है जिसमें वह सोचता था "वीर भोग्या वसुन्धरा" (स्त्री वसुंधरा है और पुरुष वीर है अत: स्त्री भोग की वस्तु है, पुरुष द्वारा भोगा जाना ही उसकी नियति है) मैं यहाँ यह भी कहना चाहूँगा कि अधिकार तो सब चाहते हैं और अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होना भी बहुत जरूरी है, लेकिन यह समझना भी जरूरी है कि अधिकारों के साथ कर्त्तव्य भी जुड़े होते हैं, अगर स्त्री के अधिकार हैं, पुरुष के अधिकार हैं तो बच्चों, माता और पिता के भी अपने अधिकार हैं, इसलिए अपने अधिकारों की रक्षा करते हुए हम इनके अधिकारों का हनन ना

International Journal of Research in Social Sciences
Available online at http://euroasiapub.org/journals.php
Vol. 7 Issue 3, March 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081 | Thomson Reuters ID: L-5236-2015
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com Double-Blind Peer Reviewed
Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

करें, अगर सभी अपने अधिकारों के बारे में ही बात करेंगे और किसी भी कीमत पर उन्हें हासिल करना चाहेंगे तो कर्त्तव्यों का निर्वाह कौन करेगा? क्योंकि अधिकार और कर्त्तव्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इसलिए जरूरी है कि सभी अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों में संतुलन बनाए रखें तभी हमें व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक खुशी मिल सकती है, जो सबके लिए उतनी ही जरूरी है जितनी जिंदा रहने के लिए ऑक्सीजन।

'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते, रमन्ते तत्र देवता' जिस परिवार में नारियों की पूजा होती है वहां देवता भी निवास करते हैं। अर्थात् जिस परिवार में स्त्रियों को उचित सम्मान दिया जाता है, उन्हें पुरुषों के बराबर महत्व दिया जाता है उसकी सोच और विचार को महत्व दिया जाता है वह परिवार निरंतर खुशहाल रहता है ऐसे परिवार में धरती पर ही स्वर्ग उतर जाता है। भारत में ऐसे ही श्रेष्ठ परिवार की कल्पना की गई है जहां स्त्री और पुरुष दोनों को बरबरी का दर्जा हासिल है। अर्द्ध नारीश्वर की आदर्श सोच भी इसी ओर स्पष्ट संकेत करती है। इसमें परस्पर सहभागिता, परस्पर निर्भरता है, दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, एक के बिना दूसरा अधूरा है। सम्पूर्णता तभी है जब दोनों साथ हैं। किसी भी रूप में दोनों में प्रतिद्वन्द्वता नहीं हैं, वरन् समर्पण है।